**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 5.2
IJAR 2020; 6(10): 08-09
www.allresearchjournal.com
Received: 03-08-2020
Accepted: 07-09-2020

**डॉ0 मधु सिंह**
अतिथि शिक्षक (दर्शनशास्त्र)
आर0बी0एस0 कॉलेज, समस्तीपुर, बिहार, भारत

**Corresponding Author:**
**डॉ0 मधु सिंह**
अतिथि शिक्षक (दर्शनशास्त्र)
आर0बी0एस0 कॉलेज, समस्तीपुर, बिहार, भारत

# स्वामी विवेकानंद के कर्मयोग

## डॉ0 मधु सिंह

**प्रस्तावना**

भारत में समय–समय पर जन्म लेकर अनेक मनीषियों ने सत्य अन्यवेषक वैदिक ऋषियों की परम्परा को निरंतर बनाए रखा। स्वामी विवेकानंद वर्तमान युग में इसी परंपरा के प्रतिनिधि थे। वह ब्रह्चर्य, दया, करूणा आदि उदार मानवीय गुणों के मूर्त रूप थे। उनके लिए प्राणीमात्र परमात्मा का अंश था। उनकी तर्कशक्ति से अद्वितीय थी। शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन में उनके व्यक्तित्व से विश्वमुग्ध हो उठा था। इसके बाद पश्चिम जगत में उन्होंने अनेक स्थानों पर व्याख्यान दी। इससे भारतीय वेदान्त का वास्तविक स्वरूप विश्व के समझ आया और अनेक अमरीकी तथा यूरोपीय उनके शिष्य बन गये। उन्होंने भक्ति योग, राजयोग, ज्ञानयोग व कर्मयोग पर जो व्याख्यान दिये वो अद्भूत हैं। हम यहॉ। उनकी कर्मयोग पर बात करेंगे। उनकी कथन हैः–

'कुछ भी न मांगो, बदले में कोई चाह न रखे। तुम्हे जो कुछ देना हेा, दे दो। वह तुम्हारे पास वापस आ जाएगा, लेकिन आज ही उसका विचार मत करो।

वह हजार गुना हो वापस आयेगा, पर तुम अपनी दृष्टि उधर मत रखो, देने की ताकत पैदा करो।दे दो और बस काम खत्म हो गया। –[1]

किसी भी कार्य के साधनों के विषय को उतना ही सावधान रखना चाहिए, जितना कि उसके साध्य के विषय में। अर्थात साधनों की ओर भी उतना ही ध्यान देना आवश्यक है, जितना साध्य की ओर। हमें केवल वही कर्म, जो मानवता और प्रकृति को मुक्त संकल्प द्वारा अर्पित करने के रूप में किया जाता है बंधन का कारण नहीं होता। हमें किसी भी प्रकार के कर्तव्य की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। जो व्यक्ति कोई छोटा या नीचा काम करता है वह केवल इसी कारण ऊॅचा काम करनेवाले की अपेक्षा छोटा या हीन नहीं हो जाता । मनुष्य की परख उसके कर्तव्य की उच्चता या हीनता की कसौटी पर नहीं होनी चाहिए। वरन यह देखना चाहिए कि वह कर्तव्यों का पालन किस ढंग से करता है। मनुष्य की सच्ची पहचान तो अपने कर्तव्यों को करने की उसकी शक्ति और शैली में होती है, जैसे मोची के उदाहरण देते हुए वे कहते है कि ''एक मोची, जो कि कम से कम समय में बढिया और मजबूत जूतों की जोड़ी तैयार कर सकता है, अपने व्यवसाय में उस प्राध्यापक की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ है जो अपने जीवन भर प्रतिदिन थोथी बकवास ही किया करता है'' ।–[2]

गीता कर्मयोग की शिक्षा देती है हमें योग (एकाग्रता) के द्वारा कर्म करना चाहिए। इस प्रकार के कर्मयोग में शुद्ध अहंभाव की चेतना नहीं रह जाती। जब योगमुक्त होकर कार्य किया जाता है, तब मैं यह वह कर रहा हूँ – यह ध्यान ही नहीं रहता।

प्रत्येक कार्य का फल शुभ और अशुभ से युक्त रहता है। कोई भी शुभ काम ऐसा नहीं होता है, जिसमें अशुभ का कुछ न कुछ स्पर्श न रहता हो, जैसा अग्नि धुएं से आवृत रहती है, उसी प्रकार कर्म में कोई न कोई दोष लगा ही रहता है, हमें ऐसे कार्यो में ही रत रहना चाहिए, जिनसे महता शुभ और न्यूनतम अंशुभ उत्पन्न हो । उनका कहना है कि अर्जुन ने भीष्म और द्रोण का वध किया। यदि यह न किया जाता तो दुर्योयन पर विजय प्राप्त नहीं होती। अशुभ की शक्तियों की शुभ की शक्तियों पर विजय हो जाती है और इस प्रकार देश पर विपतियों के काले बादल मंडराने लगते, अभिमानी और अन्यायी राजाओं के एक दल के द्वारा राज्य का शासन बलपूर्वक हड़प लिया जाता और देश की जनता पर दुर्भाग्य की कालिमा फैल जाती। इसी प्रकार कृष्ण ने भी कंस, जरासंघ इत्यादि अत्याचारियों का संहार किया, पर उनका एक भी काम उनके स्वयं के लिए नहीं था उनका प्रत्येक कार्य दूसरों की भलाई के लिए ही था। हम दीपक के प्रकाश में गीता का पाठ कर रहे है पर अनेक पतिंगे जलकर मरते जा रहे हैं। इसीसे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक कर्म में कुछ न कुछ दोष रहता ही है जो अपना क्षुद्र अहंभव भूलकर कार्य करते है, उनपर ज्ञान इन दोषों का प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि वे संसार के भलाई के लिए कर्म करते हैं।

विवेकानंद कहते है कि कर्मो में लिप्तता नहीं होती चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए कि अब 'कर्म' ही बंधन हो जाय,कर्म करने वाले पर लदकर बोझिल हो जाय। उनका कहा कहना है कि कर्ममार्गी को कर्मों का दास नहीं बनना है, उसे कर्म करना है। उसे कर्मों को संचालित तथा नियंत्रित करना है। वस्तुतः हम कर्मों के दास इसी कारण बन जाते है कि हम अपने स्वार्थ मूलक इच्छाओं की पूर्ति के लिए कर्म कहते है, हम इच्छाओं के दास बनकर कर्मों के दास बन जाते हैं। इसी कारण कर्ममार्गी के लिए इच्छाओं से उपर उठने की अनुशंसा की गयी है''—[3]

विवेकानन्द गीता में अनुशंसित निष्काम कर्म से बड़े प्रभावित हैं, उसी प्रभाव के अनुरूप वे कहते हैं कि कर्म की वास्त्वीक सार्थकता इस बात में है कि हम कर्म के प्रति दान के रूप में कुछ पाने की आशा न रखेगें। कर्मयोगी को सदा दाता के रूप में कर्म करना है वह अपने कर्मों का स्वतः उन्मुक्त रूप से अन्य के लिये, तथा जगत के लिए दान करता है। यहां विचार यह है कि कर्मयोगी का कर्म ''स्वार्थ'' से संचालित नहीं वह किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति के लिए कर्म नहीं करता बल्कि उसके कर्मों की मूल प्रेरणा अंतिम लक्ष्य मोक्ष्य है । निष्काम कर्म ही सच्चा सन्यास है।

''यह संसार कायरों के लिए नहीं है पलायन की चेष्टा मत करो, सफलता अथवा असफलता की चिंता मत करो, पूर्ण निष्काम संकल्प में अपने को लय कर दो और कर्तव्य करते चलो ।''—[4]

वे कहते है ''He works best who works without any motive ,neither for money nor for fame, nor for anythings else, and when a man can do that he will be a Buddha, and out of him will came the power to work in such a manner as will transform the world this man represents the highest ideal of karma-yoga."-5

विवेकानंद कहते है कि हमें ''स्वामी'' के समान कार्य करनी चाहिए न कि एक दास की तरफ कर्म तो निरंतर करते रहो परंतु एक दास के समान मत करो। 99 प्रतिशत लोग तो दासों की तरह कार्य करते रहते और उसका फल होता है दुख, ये सब कार्य स्वार्थपर हेाते है मुक्त भाव से कर्म करो। प्रेम साधित कर्म करो, प्रेम शब्द का यथार्थ अर्थ समझना बहुत कठिन है, बिना स्वाधीनपता के प्रेम आ नहीं सकता। दास में सच्चा प्रेम होना संभव नहीं । यदि तुम एक गुलाम मोल ले लो और उसे जंजीर से बांधकर उसे अपने लिए कार्य कराओ, तो वह कष्ट उठाकर किसी प्रकार कार्य करेगा अवश्य, पर उसमें किसी प्रकार का प्रेम नहीं रहेगा। इसी तरह जब हम संसार के लिए दाश्वत कर्म करते है तो उसके प्रति हमारा प्रेम नहीं रहता है और इसलिए वह कर्म नहीं हो सकता। हम अपने बंधु बांधव के लिए जो कर्म करते है यहॉ तक कि हम अपने स्वयं के लिए जो कर्म करते है उसके बारे में भी ठीक यही बात है।

स्वार्थ के लिए किया गया कार्य दास का कार्य है और कोई कार्य स्वार्थ के लिए हो अथवा नहीं, इसकी पहचान यह है कि प्रेम के साथ किया गया प्रत्येक कार्य आनंददायक होता है।

अतः विवेकानंद कर्मयोग के संबंध में कहते है कि हमें कर्म प्रेम से करना चाहिए और मौत के मुंह में भी बिना तर्क वितर्क के सबकी सहायता करना हमें कर्म आनंदित होकर करनी चाहिए। हमारे कर्म लोककल्याण सर्वहित के लिए होना चाहिए।

## संदर्भ सूची


1. कर्म और उसका रहस्य–स्वामी विवेकानंद राम कृष्णामठ (प्रकाशन विभाग) पेज नं0– 24
2. वहीं पेज नं0–24
3. समकालीन भारतीय दर्शन, बसंत कुमार लाल
4. कर्म और उसका रहस्य– स्वामी विवेकानंद पेज नं0–55
5. समकालीन भारतीय दर्शन, बसंत कुमार लाल, पेज नं0–45